ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-7* August- 2017
Innovation The Research Concept

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य साहित्य में युग–चेतना

राजेश पासी
शोध छात्र,
हिन्दी विभाग,
वर्धमान विश्वविद्यालय,
वर्धमान, पश्चिम बंगाल

सारांश

हरिशंकर परसाई युगचेतना से युक्त व्यंग्यकार हैं। उन्होंने युग की विसंगतियों को गहराई से समझा है। उनका व्यंग्य चेतना में हलचल पैदा करता है, जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार, ढोंगी, विद्रूपता और अन्याय से लड़ने के लिए प्रेरित करता है। व्यंग्य मानव संवेदना और सहानुभूति से व्यक्त होता है। वह मनुष्य को सच्चा इंसान बनाना चाहता है। वास्तव में वे सुधार के लिए नहीं, बदलने के लिए लिखना चाहते हैं। वै व्यंग्य को ही साहित्य का मूल आधार मानते हैं। उन्होंने प्रकृति, प्रकार और प्रयोजन को स्पष्टीकरण किया है। व्यंग्य रचना प्रक्रिया बहुत ही कठिन काम होती है। उसमें विषयवस्तु का आत्मिक ग्रहण अन्य कला (विधाओं) की तरह नहीं होता। व्यंग्य में विषय वस्तु की विशेषताएँ धूमिल नहीं होती हैं, किन्तु उसकी गुण परिस्थितियों की प्रबल, सघन और मूर्त हो जाती हैं। इस प्रकार व्यंग्य का निर्माण उसका विकास एवं उसकी परिणाम में व्यंग्यकार के व्यक्तित्व के साथ उसके बाहर का परिवेश प्रधान होता है।

कन्हैयालाल नन्दन ने ठीक ही लिखा है कि – ''व्यंग्य परिहासपूर्ण हल्की मनःस्थिति में लिखा ही नहीं जा सकता। जब तक कि रचनाकार को विसंगतियों, असमंजस्य, पाखण्ड, भ्रष्टाचार के प्रति वितृष्ण भाव मानसिक रूप से भीतर ही भीतर ऐंठने नहीं लगेगा, व्यंग्य के लिए अनिवार्य आक्रोश की उत्पत्ति नहीं हो सकती। लेकिन व्यंग्य आक्रोश का उबलता हुआ तूफान नहीं है, पीड़ा और आक्रोश का संयमपूर्ण सृजन है – संयमपूर्ण सृजन जहाँ आदमी आक्रोश को पिघले हुए ताँबे के रूप में तपाकर रचनात्मक साँचें में ढलता है, ताकि विकृति चौराहे पर नंगी खड़ी की जा सके और पाठक उसकी गलाजत को पहचान सके।''[1] हरिशंकर परसाई विशेष प्रतिभा के धनी थे. उनकी प्रतिभा ने उनके व्यक्तित्व को असाधारण लेखक के रूप में प्रतिष्ठित किया। उन्होंने स्वयं अपने लेखक को एक ईमानदार सामाजिक लेखक के रूप में उभारा है। बाहर की दुनिया से उनका संघर्ष उनकी सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के कारण था।

परन्तु उनका अपना संघर्ष अभिव्यक्ति का कठिन आत्मसंघर्ष था। इसके पश्चात् उन्होंने अपने आपको समाज से अलग–थलग व्यक्ति के रूप में विशेष नहीं बनाया। बल्कि इसके विपरीत अपनी प्रतिभा के समूचे विशेषता हृदय के साथ मिलाकर करते हुए सामने रखते हैं। समाज के संघर्ष ने उन्हें लेखक बनाया और उन्होंने अपने से असामान्य उपलब्धि को समाज को पुनः वापस लौटा दिया, लेखन के रूप में। यह समाज के ईमानदार लेखक की जीवन भूमिका का दस्तावेज है।

मुख्य शब्द : हरिशंकर परसाई, व्यंग्यकार, युग–चेतना।

प्रस्तावना

हरिशंकर परसाई ने अपने एक लेख में कहा है कि ''व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता है ..... यह नारा नहीं जीवन के प्रति व्यंग्यकार की उतनी ही प्रतिष्ठा होती है जितनी गम्भीर रचनाकार की बल्कि ज्यादा ही। वह जीवन के प्रति दायित्वों का अनुभव करता है। जिन्दगी बहुत जटिल चीज है। इसमें खालिस हँसना या खालिस रोना जैसी चीज नहीं होती। बहुत सी हास्य रचनाओं में करूणा की धारा है। अच्छा व्यंग्य सहानुभूति का सबसे उत्कृष्ट रूप होता है।''[2] इस तरह हम देखते हैं कि हरिशंकर परसाई ने अपने आँखन देखी पर ज्यादा विश्वास किया है। वे जो लिखते हैं वह युग में फैली हुई सड़ान्ध, राजनीतिक भ्रष्टाचार, नेताओं की क्रूरता, धर्मांधों की चालाकी पर आघात करते हैं, उनके व्यंग्य लेखन की यही महत्ता है।

जब हरिशंकर परसाई व्यंग्य लेखन के क्षेत्र में आए तो उन्होंने व्यंग्य को हिन्दी साहित्य में स्वतंत्र प्रतिष्ठा देने का लक्ष्य पूरा किया। इनकी रचनाएँ सन् 1947 से परसाई जी अपने वंयग्य लेखन की यात्रा आरम्भ करते हैं। 23 नवम्बर 1947 को उनकी रचना ''पैसे का खेल'' में छपती है, सन् 1955 तक लगातार ''प्रहरी'' में उनकी रचनाएँ छपती रहीं। सन् 1995 से 'जनयुग'' में ''ये माजरा क्या है'', साप्ताहिक लेख माला ''आदम'' नाम से तथा ''नयी दुनिया' में ''सुनो भाई साधो'' साप्ताहिक लेख माला कबीर के नाम से लिखते हैं। ''कल्पना'' या ''नई कहानियाँ'' में इनके कॉलम नियमित छपा करते थे और ''सारिका'' में ''कबीरा खड़ा बाजार में'' कथा यात्रा में ''रिटायर्ड भगवान की कथा'', ''परिवर्तन'' में ''अरस्तू की चिठी'' करंट में ''देख कबीरा रोया'' तथा ''माटी कहे कुम्हार से'' आदि कॉलम भी लिखा है। इसेक अलावा परसाई जी ने ''वसुधा'' पत्रिका की सम्पादकीय जिम्मेदारी'' भी कुछेक वर्षों तक निभाई।

उनकी समस्त त्रुतियाँ ''परसाई रचनावली' छः खण्डों में संकलित है, उनकी प्रमुख व्यंग्य रचनाएँ निम्नलिखित हैं – ''हँसते हैं रोते हैं'' (1951), ''तबकी बात और थी'' (1956), ''भूत के पाँव पीछे'' (1961), ''रानी नागफनी की कहानी'' (व्यंग्य उपन्यास 1962), ''तट की खोज'' (1955), ''सदाचार की ताबीज'' (1967), ''निठल्ले की डायरी'' (1968), 'वैष्णव की फिसलन'' (1976) आदि हैं। हथौड़े की चोट करने वाले परसाई ने हिन्दी व्यंग्य साहित्य में करीब 22 कृतियाँ लिखी हैं।

आज प्रत्येक रचनाकार स्वतंत्र देश के गणतंत्र को देख रहा है, चाहे वह शरद जोशी हो या नरेन्द्र कोहली, पर परसाई को तो यह गणतंत्र ठिठुरता हुआ लगता है जब गणतंत्र सिकुड़ रहा हो तो जरूरी है कि सूर्य की गरमाहट आये। पर सूरज तो कब्ज है, आये तो कहाँ से आये, परसाई जी का सूरज आजादी का है–दुःख विदाओं को दूर करने वाला, जिसकी प्रतीक्षा इस युग की बड़ी–बड़ी बेसब्री से। परसाई जी के अनुसार यह आज का नेता बोल रहा है – ''जरा धीरज रखिए। हम कोशिश में लगे हैं कि सूरज बाहर आये। पर इतने बड़े को बाहर निकालना आसान नहीं है वक्त लगेगा, हमें सत्ता के कमसे कम सौ वर्ष तो दीजिए।''[3]

कितनी बड़ी बिडम्बना है कि सत्ता के लोभी नेता राजनीति के दाँव–पेंच में लिप्त हैं। असहाय जनता केवल आश्वासनों के विश्वासघात को चुपचाप सहने के सिवा दूसरा कोई विकल्प नहीं है। हमारे देश की राजनीति को अवसरवाद और दल–परिवर्तन ने बहुत ही भ्रष्ट बना रखा है, राजनीति के इन मदों पर परसाई जी ने बहुत ही तीखा व्यंग्य किया है। उनके शब्दों में – ''एक समाजवादी उसका एक हाथ पकड़ता है तो दूसरा उसका हाथ पकड़कर खींचता है। तब बाकी समाजवादी छीना–छपटी करके हाथ छुड़ा देते हैं।''[4] इन नेताओं के मुखौटे सदाचारियों के हैं, सदाचार का ताबीज पहनकर ये भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं और स्वयं भ्रष्टाचार करते हैं। हिन्दी व्यंग्य साहित्य और परसाई जी ने अपने को एक दूसरे के पर्याय हैं। प्रेमचन्द की परम्परा को जीवित रखते हुए परसाई जी ने अपने तरीके से स्वतंत्र भारत के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त विसंगतियों को अपनी सार्थक दिशामुक्त प्रखर दृष्टि का लक्ष्य बनाया। जैसे प्रेमचन्द की रचनाओं में स्वतंत्रता पूर्व के भारत का यथार्थवादी इतिहास सुरक्षित है वैसे ही परसाई की रचनाओं में स्वतंत्रता पश्चात भारत का विश्लेषणात्मक परिदृश्य प्राप्त होता है, आजादी के घूसखोरी और विसंगतियाँ उभरकर सामने आती है। आज के राजनीतिज्ञ अपने–अपने स्वार्थों में लगे हैं। वह बड़ा ही घिनौना है – ''साहब बोले–आप बैरागी हैं। दफ्तरों के रीति–रिवाज को नहीं जानते। असल में भोलाराम ने गलती की भई, यह भी एक मंदिर है यहां भी दान–पुण्य करना पड़ता है। आप भोलाराम के आत्मीय मालूम पड़ते हैं। भोलाराम की दरख्वास्तें उड़ रही हैं, उन पर वनज रखिए।''[5]

वजन रखिए शब्द पर घूसखोरी पर व्यंग्य है। भोलाराम की फाइल पर जितना ही अधिक पैसे का वजन होगा उतना ही जल्दी भोलाराम का कागज मिलेगा।

व्यंग्य उभरता है जब नारद ने अपनी वाणी दे दी। अर्थात् आज के युग में पैसा बोलता है। पैसे का वजन रखते ही भोलाराम की फाइलें एक टेबल से दूसरे टेबल पर दौड़ने लगी। यह है आजादी के बाद के शासन में घूसखोरी। प्रजातंत्र में भ्रष्टाचार और नौकरशाही की सारी लालफीताशाही की निरन्तरता जारी है। राजनेता और नौकरशाही की मिलीभगत देश में भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है।

''भगत की गत'' में धार्मिक पाखण्ड पर परसाई जी ने व्यंग्य किया है कि – ''भगवान ने कहा वे तो अपनी चीज का विज्ञापन करते हैं। मैं क्या कोई बिकाऊ माल हूँ?''[6] भारतीय समाज में धार्मिक पाखण्डी पुजारी मन्दिरों में लाउडस्पीकर मँगाकर भजन–कीर्तन कराते हैं और समझते हैं यह सब भगवान को खुश रखेगा और उनको मुक्ति मिल जायेगी।

इसी तरह ''वैष्णव की फिसलन'' नामक व्यंग्य लेख में परसाई जी कहते हैं कि – ''अब वैष्णव का होटल खूब चलने लगा। शराब, गोश्त, कब्बरे और औरत। वैष्णव धर्म बराबर निभ रहा है।''[7] वैष्णव चाहता है कि भगवान के नाम पर मरा (मुर्दा) और जिन्दी मांस, शराब और कबाब के पूरे भोग के मजा जरूर लेना चाहता है, इसम में धार्मिक प्रवृत्ति के लोग, पाखण्ड, पुजारी अपने बौतिक सुख के लिए करते हैं जिस पर परसाई जी ने कटु और तीव्रतर व्यंग्य प्रहार किया है।

धर्म और आध्यात्मिक नाम पर ढोंगी साधु–संतों ने हमेशा भारतीय समाज के भोली–भाली लोगों को बेवकूफ बनाकर लूटा और धन हड़पने का काम किया है। वे लोग धर्म भीरुता का सब्ज बाग दिखाकर जनता का मनोवैज्ञानिक लाभ लेते हैं। भारत के अधिकांश लोग धर्म से डरते हैं। अतः धर्मभीरुता को लोगों का अनिवार्य गुण बताकर पाखण्डी–पुजारियों ने अपने प्रपंचों से आम जनता को प्रभावित करना भी जानते हैं। उनके लेख में जीवन के चारों ओर फैले अंधकार की चर्चा है। ''साधु ने समझाया महाराज भ्रष्टाचार और सदाचार मनुष्य की आत्मा में होता है बाहर से नहीं आता।''[8]

यहाँ ढोंगी–पाखण्डी साधु धर्म का उपदेश देता है और उसका उपदेश से सभी लोग नाटकीय ढंग से

प्रभावित होते हैं। वे सब अपने को अधम नीच मान लेते हैं और आत्मा की प्रकाश के लिए पाखण्ड संतों के पास एकत्र होकर भौतिक सुख की वस्तु देने लगते हैं।

हरिशंकर परसाई जी ने शिक्षा के क्षेत्र में भी कटु व्यंग्य किया है। शिक्षण संस्थाएँ नवयुवक छात्राओं को अंधकूप में ढकेल रही है। विद्यार्थी समूह अपने को खोखला एवं परतंत्र बनाता जा रहा है। ''रानी नागफणी की कहानी'' में अस्तमान अपने पिताजी से कहता है कि – ''पिताजी आपके कुल में विद्या की परम्परा नहीं है। आप बारह खड़ी से आगे नहीं पढ़े और पितामह भी स्याही का उपयोग केवल अंगूठा लगाने के लिए करते थे। मैंने विद्या की परम्परा डालने की कोशिश की पर मैं असफल हुआ।''[9] वह चाहता है कि बिना पढ़े–लिखे कुछ ले–देकर बी.ए. की डिग्री मिल जाये। आज की हमारी शिक्षा व्यवस्था में भी काफी दुर्नीतिग्रस्त होती जा रही है। विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय एक बौद्धिकहीनता के परिवेश में साँस ले रहा है। छात्र समूह बिना परीक्षा के झमले में पड़े इम्तहान में पास करने के लिए गैर–कानूनी तरीकों का सहारा ले रहा है।

जब परसाई जीके युग की बात युग के लिए लिखते हैं तो हम देखते हैं कि आज भी एकलव्य से अँगूठा गुरू दक्षिणा के रूप में माँगा जाता है। सहसा अर्जुन हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला – ''तो गुरूदेव, मुझे वर दीजिए कि मैं ही फर्स्ट क्लास आऊँ और छात्रवृत्ति लेकर विदेश जाऊँ।''[10] गुरू की सेवा करता है और गुरू भी अपने शिष्य से गुरू दक्षिणा प्राप्त करता है। इस प्रकार हमारे शिक्षा व्यवस्था की त्रुटियों को परसाई जी ने ब–खूबी उजागर किया है। किस कदर पूँजीवादी और सामन्ती मनोवृत्ति के लोग सत्ता तथा पूँजी के जरिए सब कुछ खरीदते हैं।

परसाई जी के व्यंग्य के धरातल पर कहीं नहीं मिलते हैं, उनके व्यंग्यों में बौद्धिकता के साथ–साथ मानवीय सहानुभूति एवं संवेदनाओं की मार्मिक अभिव्यक्ति भी निहित रहती है, जिस प्रकार कबीर के व्यंग्यों में तिलमिलाहट पैदा करने वाली शक्ति है। ठीक उसी प्रकार उनके रचनाओं में व्यंग्य तीक्ष्णता और विकलता उत्पन्न करने वाली शक्ति देखी जा सकती है। बिना लाग–लपेट के अपनी बात को ठेठ तथा सीधे–सादे शब्दों में व्यक्त कर देना वस्तुतः परसाई जी की रचना और शिल्प की प्रमुख विशेषता है। उनके व्यंग्यों का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और उनकी प्रङुति भी विशिष्टता लिए हुए परिलक्षित होती है। सामाजिक और राजनीतिक प्रसंगों पर सबसे अधिक व्यंग्य लिखे हैं। राजनीति पर उनका व्यंग्य बड़ा ही कटु और तीव्रतर प्रहार करते हैं। आज के युग में राजनेता किस कदर अपनी चाल–ढाल बदल कर अपने आपको बड़ा हस्ती के रूप में ख्याति अर्जित करते हैं। परसाई जी ने ''भेड़ें और भेड़िए'' व्यंग्य नामक कहानी में लिखा है कि –– ''सियार ने भेड़िए का हाथ चूमकर कहा, बड़े भोले हैं आप सरकार! और रूप–रंग बदल देने से तो सुना है आदमी तक बदल जाते हैं फिर ये तो सियार हैं।''[11]

इस तरह उनका व्यंग्य, लेख से पता चलता है कि वोट में विजयी होने के लिए अपना चोला आज के नेता किस प्रकार बदल लेता है। इस प्रकार उनका व्यंग्य राजनीतिक और सामाजिक जीवन के खरेपन का व्यंग्य है। वर्तमान समय में मनुष्य आधुनिक बन गया है, जीवन मूल्यों में बदलाव सा आ गया है। परसाई जी का कहना है कि – ''अब चरण छूने का मौसम नहीं है, लात मारने का मौसम है। मारो एक लात और क्रांतिकारी बन जाओ।''[12] ऐसी श्रद्धा और पैर छूने का दिखावा करने से अच्छा है कि श्रद्धालु का विरोध करके क्रांतिकारी बन जाय। इस प्रकार परसाई जी आज के युग के बदलते जीवन मूल्यों को ''विकलांग श्रद्धा का दौर'' कहकर उससे मुक्त होने की प्रेरणा दिए हैं।

''ठिठुरता हुआ गणतंत्र'' नामक रचना में परसाई जी ने वर्तमान समय की यथास्थिति और राजनेताओं में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा स्वार्थी भावना से झूठा वादा देता है। गणतंत्र की स्थापना दिवस का हम समारोह मानते हैं समाजवाद का दुहाई देते हैं, इस तरह के राजनेताओं पर तीखा व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि – ''गणतंत्र ठिठुरते हुए हाथों की तालियों पर टिका है। गणतंत्र को उन्हीं हाथों की ताली मिलती है, जिनके मालिक के पास हाथ छिपाने के लिए गर्म कपड़ा नहीं है।''[13] ठिठुरते हुए हाथ, हाथ ही गणतंत्र में विश्वास और आस्था रखे हुए हैं। भारतीय राजनीति में भ्रष्ट नेताओं का चरित्र के चलते आये दिन गणतंत्र को खोखला करता जा रहा है। यह बहुत ही चिंताजनक बात है।

''परछाई भेदन'' परसाई जी का एक महत्वपूर्ण राजनीतिक व्यंग्य रचना है जिसमें वे भ्रष्ट राजनेताओं के मुखौटे उतारते हैं जो गाँधी जी का नाम लेकर लूट व राज कर रहा है। गाँधीवादियों की तरफ से तक देता है कि ''यह गाँधी का देश है। इस देश का राष्ट्रपति ऐसे आलीशान भवन में शान–शौकत से रहे, धिक्कार है।''[14] उन गाँधीवादियों का एकमात्र उद्देश्य क्रांति करना नहीं और न ही लोगों की सेवा करना बल्कि बहुत ही सहज तरीके से सस्ती लोकप्रियता पाना है। ''हम बिहार में चुनाव लड़ रहे'' नामक रचना में जाति एवं सम्प्रदाय के नाम पर भारतीय लोकतंत्र के अन्तःविरोधों पर करारा व्यंग्य करते हैं। जातिवाद का नाम लेकर राजनीतिक दलों के खोखले नारे एवं सत्ता के अंकगणित पर तीखा व्यंग्य किए हैं। बिना जाति का नाम लिए चुनाव जीत पाना असम्भव है – ''कृष्ण ने कहा, मैं ईश्वर हूँ मेरी कोई जाति नहीं है।''[15] पर बिहार की राजनीति में कृष्ण को भी बिना अपनी जाति के सिवा कोई वोट नहीं देता है। ''देखिए न इधर भगवान होने से तो काम नहीं चलेगा। आपको कोई वोट नहीं देगा। जात नहीं रखिएगा, तो कैसे जीतिएगा।''[16] स्वयं श्रीकृष्ण को भी लोग वोट देने को तैयार नहीं हैं।

इस तरह देखते हैं कि परसाई जी ने अपने लेखनी में व्यंग्य का परिष्कार किया है। अपितु उसे अपने पैरों पर खड़े होने का बल दिया है। वे आधुनिक युग के कबीर है। उन्होंने अपने तमाम समस्याओं, यातनाओं तक पीड़ाओं को भी वाणी दी है। उनके व्यंग्य सामान्यतः मूल्यगत विसंगतियों से सम्बद्ध होता है। मूल्य चाहे राजनीतिक हो, चाहे सांस्कृतिक। उन्होंने बुद्धिजीवियों, नौकरशाहों, सेठ–साहूकारों, धार्मिक महात्माओं, पण्डे–पुजारियों, अवसरवादियों के छल–छम एवं पाखण्ड पर जबरदस्त प्रहार किया है।

'लंका विजय के बाद' में वानर सीता के परित्याग के बाद ''सीता सहायता कोष खोलकर अयोध्या की उदार और श्रद्धालु जनता से चन्दा लेकर खा गये हैं। महान तपोव्रति एवं समाजसेवी भैया–साव का तपोभंग मेनका क्या करेगी वह तोप तपोभंग को स्वयं उद्योगरत है।''[17] स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे देश में देश सेवा और देश के प्रति बलिदान के बदले अब वह सत्ता पर कब्जा चाहने लगी। इस तरह परसाई जी की व्यंग्य लेख राजनीतिक घटनाओं और परिस्थितियों की बिडम्बनाओं को सामने लाकर संतुष्ट नहीं होजाते बल्कि उसके कारणों पर जबरदस्त वार करते हैं। ठीक उसी प्रकार एक और व्यंग्य लेख ''मिलावट की सभ्यता'' में कहते हैं कि – ''शुद्ध माल मुर्दाबाद, मिलावटी संस्ड्रति जिन्दाबाद, महाजनी सभ्यता अमर हो।''[18] भ्रष्ट लोग प्रचार करते हैं और उस पर काला बाजारी और मिलावट करने वालों को सजा नहीं दे सकते, क्योंकि उसकी पहुँच ऊपर तक है। वे तटस्थ रहकर जीवन का सूक्ष्म निरीक्षण करते हैं और उसके भीतर पूरी गहराई के साथ प्रवेश करते हैं। प्रहार किस पर हो रहा है और कब्सा प्रभाव पड़ता है इसकी परवाह किये बिना वे निरन्तर काल हथौड़े की तरह हाट करते रहना लेखन की विशेषता है।

उनके विषय में कमला प्रसाद कहते हैं कि – ''परसाई जी 20 वर्ष तक बिस्तर पर रहे। पहले दिन चर्चा अलग थी। घूमते रहते। बस स्टैण्ड में घूमते, पान की दुकान में बैठते, चाय टपरियों में पीते, पल्लेदारों से बात करते। जहाँ कामगार होते वहाँ जाते। बुद्धिजीवी, व्यापारी, नेता होते तो वहाँ भी होते, ट्रेन में तीसरे दर्जे सफर करते और चुपचाप आम जनता की बातें सुनते। कहते असली पाठशाला यही है।''[19]

परसाई जी का पूरा व्यंग्य साहित्य समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक परिदृश्य में एक नैतिक और रचनात्मक हस्तक्षेप है जो वर्तमान भारतीय समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए संस्कारित करता है। उनका व्यंग्य देश के नक्शे पर व्याप्त कुरीतियों का पर्दाफाश करता है। उन्होंने ''रिटायर्ड भगवान की कथा'' व्यंग्य उपन्यास में कहा है कि – ''भगवान ने कहा – वह मेरा प्रतापी भक्त महन्त किस सावित्री वाले केस की बात कर रहा था।''[20] महन्त ढोंगी साधु औरतों को भगाकर बेचने का धंधा करता है। वह भ्रष्ट भक्त तस्करी का काम करता है। यह सब पुलिस की मदद से होता है। इसके बदले उसे घूस देता है।

परसाई जी के व्यंग्य की यह तिलमिलाहट अमानवीय आचरण के प्रति होती है, मानवीय आस्थाओं एवं विश्वास के प्रति सहानुभूति और संवेदनाओं के कारण उनके भीतर अश्रु करूणा की धारा है। परसाई जी का यह आक्रमण व्यंग्य के उनके हृदय का क्रन्दन ही है, जो व्यवस्था की सड़ांध से क्षुब्ध है। आज का जीवन व्यापक धरातल पर विसंगतियों, दोगलापन, कमीनेपन, पाखण्ड से पूर्ण है। इनकी यथातथ्यात्मक अभिव्यक्ति स्वतः ही कटुता अपने साथ ले आती है। क्योंकि जो हो रहा है, वह सही नहीं है। जब भी कोई सचेत लेखक समाज और जीवन की आँखों में ऊंगली रखकर उन्हें उसकी विसंगतियाँ देखने लगता है तो उसमें एक तरह की कटुता आ जाती है। उनके सम्बंध में रवीन्द्रनाथ त्यागी जी कहते हैं – ''परसाई जी साहित्य और नौकरशाही को भी खूब पकड़ा तो आम आदमी से सम्बंधित शायद ही ऐसा कोई मुद्दा छोड़ा जिस पर उन्होंने शानदार सफलता से न लिखा हो।''[21]

एक सचेत लेखक के गलत के प्रति वितृष्णा पवित्र इसलिए होती है क्योंकि वह पवित्र आस्थाओं के पुनः स्थापन का इच्छा लिए होती है। अपने लेखों का विचार विश्लेषण करते हुए परसाई जी कहते हैं – ''मेरी रचनाओं को पढ़कर हँसी आ जाना प्रासांगिक है। यथेष्ट नहीं। और चीजों की तरह मैं व्यंग्य को उपहास, मखौल न मानकर एक गम्भीर चीज मानता हूँ। साहित्य के मूल्य जीवन मूल्यों से बनते हैं। वे रचनाकार के एकदम अन्दर से पैदा नहीं होते...तो जीवन जैसा है उससे बेहतर होना चाहिए।''[22] पूरे जीवन को देखता है कहा– कहाँ कमियाँ हैं–कहाँ–कहाँ एकदम बदलाव चाहिए। कौन से मूल्य गलत हैं और उसे समाप्त करना है। किस परम्परा को कब्सर की तरह जीवित रखा है, कहाँ पर विसंगति, अन्याय, मिथ्याचार, शोषण, ढोंगी, भ्रष्टाचार और पाखण्ड आदि है। वे कोशिश करते हैं, इसे देखकर गहराई में प्रवेश करते हुए अन्वेषण करता है फिर उसको अर्थ देता है और उस पर अनुभव को विश्लेषण करके रचनात्मक चेतना का हिस्सा बनाकर कुछ इस प्रकार से कहता है कि एक विषय वस्तु ताकत के साथ अभिव्यक्ति होता है। वह जीवन समीक्षा और अपने साक्षात्कार के उद्देश्य से करता है।

परसाई जी के सोच विचार सेयह स्पष्ट होता है उनकी रचनाओ में वर्णित विसंगतियों में काल्पनिक विसंगतियाँ नहीं, अपितु जीवन की समीक्षात्मक विसंगतियाँ हैं। उनके सम्बन्ध में प्रो0 राधेमोहन शर्मा का वक्तव्य है – ''परसाई जी का व्यंग्य अमरता नहीं जिजीविषा का हिमायती है। उनमें सूक्ष्मग्राहिता, संवेदनशीलता तथा जीवन के बहुआयामी पक्षों को उघाटित करने की अमर क्षमता है।''[23]

परसाई जी के व्यंग्य साहित्य में अभुत विविधता है। उसमें राजनैतिक, शासन, भ्रष्टाचार, धर्म, शिक्षा, सामाजिक व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, पुलिस, अस्पताल, साहित्य आदि क्षेत्रों में फैली विसंगतियों और न्याय बराबर गया है। उसके तह तक गये, उसके कारणों की जाँच–पड़ताल की और फिर अपने इस विचार विश्लेषण को रचनात्मक चेतना का अंग बनाकर प्रभावी रूप से व्यक्त किया। इसलिए इस विषम कारणों को उभारने के बाद पाठक वर्ग यथावत् न बना रहे। बल्कि उनकी चेतना में उद्वेलन हो, कोई बौखलाहटपूर्ण प्रतिक्रिया हो, और यह सुनकर उसके मन बदलाव की इच्छा जरूर हो। परिवर्तन की कामना को जगाना ही परसाई जी का प्रयोजन है। इसलिए उनके सम्बंध में संध्या कुमारी सिंह का मन्तव्य है कि ''व्यंग्य–पुरुष हरिशंकर परसाई ने अपने लेखन कर्म को सामाजिक विद्रूपताओं व राजनैतिक विसंगतियों के खिलाफ लड़ने के एक हथियार के रूप में तब्दील किया।''[24] सामाजिक बेचैनी सम्पूर्ण व्यवस्था, तंत्र के चुनौती बन सकती है। अतः परसाई स्वीकार करते हैं कि वे सुधारवादी नहीं बल्कि परिवर्तनकामी है। ''हम लेखक

कुल इतना कर सकते हैं कि इस व्यवस्था की सड़ांध को उजागर करे और परिवर्तन की चेतना का निर्माण करें।''[25] परिवर्तन व्यापक जन आन्दोलन की जरूरत है। इस तरह के आन्दोलन उन असंख्य मजदूर, किसान और गरीब जनता की ओर होगा जो हमेशा बदलाव के आन्दोलनरत हैं। जीवन के चुनाव किए गये चरित्रों को वह गहन अध्ययन करता है।

व्यंग्य एक सकारत्मक चीज है, उसे नकारात्मक नहीं मानना चाहिए। व्यंग्य लेखक यह दर्शाते हैं कि समाज में यह बुरा है, यह असंगत है, यह अकल्याणकारी है इसलिए वह बहुत दुःखी है कि बुरा क्यों होता है, वह एक बेहतर समाज व्यवस्था के प्रति आस्था रखता है। वे हिन्दी के सशक्त व्यंग्यकार हैं। उनके सम्बन्ध में सुरेश कान्त जी कहते हैं कि – ''पारिवारिक जीवन से लेकर सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन की विसंगतियाँ परसाई की चेतना को झंक्रत करती हैं।''[26]

इस तरह उनके व्यंग्य में केवल विसंगतियों की चर्चा ही नहीं करते, वरन् अपने स्वस्थ चिन्तन के आधार पर सही दिशा देने का प्रयास करते हैं।

सन् 15 अगस्त 1947 ई0 को प्राप्त हुई भारतीय आजादी ने प्रत्येक नागरिक में राजनीतिक चेतना का संचार किया। आजादी ने समस्त आम जनता को मुक्ति का संदेश दिया। जनता को उनके अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक किया। व्यक्ति–चेतना ने परम्परागत कुरीतियों को तोड़ना एवं नवोत्थान करना प्रारम्भ किया। आम जनता राजनीति की केन्द्र बन गई। आजादी के पश्चात् देश में सत्ता की बागडोर राजनीतिक शक्तियों ने ले ली। स्वाधीनता के पश्चात् लेकतांत्रिक शासन व्यवस्था को मजबूत बनाने हेतु समाज में सामंती–व्यवस्था का उन्मूलन अधिनियम, भूमि–सुधार कार्यक्रमों, भौतिकवाद का विकास, वित्तीय संस्थाओं का राष्ट्रीयकरण आदि प्रगतिशीलता की घोषणा की गई। हरिशंकर परसाई जी के पूर्व भी राजनीतिक व्यंग्य लिखे गये, परन्तु उनके समय में सर्वाधिक विड्डतियाँ, विसंगतियाँ, असामंजस्य उभरकर सामने आयी। वे सजग, सचेत व्यंग्यकार हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दुस्तान की राजनीति का बड़ा सूक्ष्म ज्ञान परसाई जी को था। वह एक सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में भी काम भी किया था। पहले समाजवादी दल और बाद में साम्यवादी दल से जुड़े रहे। हरिशंकर परसाई जी कहते हैं कि – ''राजनीति बहुत बड़ी निर्णायक शक्ति हो गयी है. .. राजनीति सिद्धान्त और व्यवहार ही हमारे जीवन का एक अंग है। उससे नफरत करना बेवकूफी है। राजनीतिक से लेखक को दूर रखने की बात वही करते हैं जिनके निहित स्वार्थ है जो डरते हैं कि लोग कहीं हमें समझ न जाएँ। मैंने पहले भी कहा है कि राजनीति को नकारना भी एक राजनीति है।''[27]

स्वाधीनता के पश्चात नैतिक मूल्यों का पतन एवं किसी भी प्रकार गद्दी प्राप्त कर लेने की लालसा ने राष्ट्र के राजनीतिक परिवेश को कलंकित कर दिया। इस प्रकार की सत्ता–लोलुपता तत्कालीन भारतीय राजनीति की एक विचित्र त्रासदी है, जिसके चलते आए दिन भारतीय प्रजातंत्र को कलुषित होना पड़ता है। लोकतंत्र व स्वाधीनता की उजास आम जनता तक नहीं पहुँ पाती है। भारतीय मजदूर, किसान, गाँव की जनता से लेकर शहर की गरीब जनता अब अपने देश के राजनेताओं द्वारा शोषित होने लगे। आजाद भारत में नैतिक मूल्यों में बड़ी तेजी से बदलाव आने लगे। जीवन बोध में ह्रास होने लगे जिसका फल आम आदमी को भोगना पड़ा।

हरिशंकर परसाई जी अपने व्यंग्य–लेखन से राजनीतिक परिवेश के विसंगति, भ्रष्टाचार, घूसखोरी आदि परिस्थितियों पर तीखा व्यंग्य प्रहार करते हैं। उन्होंने अपने समय में राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक स्तर पर जो भी घटनाएँ घटित हुई है उस पर अपनी प्रतिक्रिया दी है। हरिशंकर परसाई जी चाहे राष्ट्रीय राजनीति हो अथवा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, सब पर बहुत ही तीखी प्रतिक्रिया दी है। वे जब व्यंग्य लेखन में दस्तक दे रहे थे तब द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात बढ़ रहे पूँजीवादी तथा अवसरवादी प्रभाव की वजह से पूरी दुनिया विद्रूपताओं एवं अन्तर्विरोधों के जटिल मकड़जाल में उलझा था। हर क्षेत्रों पर निराशावादी, मोहभंग तथा एक विचित्र–सी आपा–धापी से संसार के अधिकांश राष्ट्र गुजर रहे थे। परसाई जी की व्यंग्य–रचना–दृष्टि इन समस्त परिवर्तनों को बड़ी सूक्ष्मता एवं गम्भीरता से पकड़ती है और प्रत्येक विसंगतियों एवं अन्तर्विरोधों को बेनकाब करती है।

हरिशंकर परसाई जी के समस्त राजनीतिक व्यंग्य–लेखन को तीन हिस्सों में विभाजित करके अध्ययन कर सकते हैं। प्रथम भाग में उन समस्त व्यंग्य–रचनाओं को रखा जा सकता है, जिसमें भारतीय राजनीति में व्याप्त विसंगतियों पर प्रहार किया गया है।

दूसरे भाग में उन समस्त व्यंग्य–रचनाओं को रखा जा सकता है जिसमें भारतीय राजनीति में विकलांग चित्रण तथा राजनेताओं के कारनामों का पर्दाफाश किया गया है। उनके राजनीतिक व्यंग्य–लेखन के तीसरे भाग में वे सब रचनाएँ आती है जो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति तथा राजनेताओं पर केन्द्रित है।

हिन्दुस्तान विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है और यहीं पर लोकतंत्र का सबसे ज्यादा मजाक उड़ाया गया है। दरअसल लोकतांत्रिक व्यवस्था या तंत्र में कोई खामियाँ नहीं होती, उसे संचालित करने वाले ही दोषी होते हैं। पर हमारे यहाँ की राजनीतिक पार्टियाँ तथा जन–प्रतिनिधियों ने मतदान द्वारा गद्दी तक पहुँचने के लिए हर गलत मार्ग अपनाये। बूथ–कब्चरिंग, हिंसा, झूठा प्रचार, हत्या तथा असामाजिक तत्वों का इस्तेमाल मतदान के दौरान आम घटना हो गई है। इस पर परसाई जी 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र' नामक व्यंग्य लेख में कहते हैं कि – ''स्वतंत्रता–दिवस भींगता है और गणतंत्र ठिठुरता है। मैं ओवरकोट में हाथ डाले परेड देखता हूँ। ... घोर करतल ध्वनि हो रही है मैं देख रहा हूँ, नहीं हो रही है। हम सब तो कोट में हाथ डाले बैठे हैं। बाहर निकालने का जी नहीं होता। हाथ अकड़ जायेंगे। लेकिन हम नहीं बजा रहे हैं, फिर भी तालियाँ बज रही हैं। मैदान में जमीन पर बैठे वे लोग बजा रहे हैं, जिनके पास हाथ गरमाने के लिए कोट नहीं है, लगता है, गणतंत्र ठिठुरते हुए हाथों की तालियों पर टिका है।''[28]

इस तरह उन्होंने भारतीय गणतंत्र को यथार्थ पूर्ण स्थिति के रूप में अभिव्यक्त करते हैं। ठिठुरते हुए

हाथ ही लोकतंत्र में भरोसा एवं आस्था रखे हुए हैं नहीं तो भारतीय राजनेताओं ने आए दिन जिस तरह से लोकतंत्र को खोखला करने के प्रयास में लगे हैं। वह बहुत ही सोचनीय बात है?

आजादी के पश्चात् भारत ने सन् 1950 ई0 में अपने एक संविधान का निर्माण किया। देश में एक नया संसदीय लोकतांत्रिक शासन–व्यवस्था को अपनाया, पर सबसे बड़ी विडम्बना यह रही है कि हिन्दुस्तान की शासन–व्यवस्था पर ब्रिटिश शासन–व्यवस्था का प्रभाव बना रहा। ब्रिटिश शासकों की जगह भ्रष्ट भारतीय शासक आए पर शासक का रूप बदल जाने से न व्यवस्था बदली और न सत्ता का चरित्र बदला। इस तरह हरिशंकर परसाई जी ने बदलते हुए विद्रुत राजनीतिक परिदृश्य का इतिहास प्रस्तुत करते हैं। सत्ता के तिलिस्म को बेनकाब करते हुए वे कहते हैं कि – ''अंग्रेजी छूरी–काँटे से प्लेट में रखकर इंडिया को खाते रहे। देशी साहब बचे भारत को खाने लगे। विदेशियों ने ट्रांसफर ऑफ पावर – सत्ता का हस्थांतरण कहा। वास्तव में ट्रांसफर ऑफ डिस हुआ। परोसी थाली एक के सामने से दूसरे के सामने आ गयी। वे देश को पश्चिमी सभ्यता के सलाद के साथ खाते थे और देशी सत्ताधारी जनतंत्र का आचार के साथ खाते हैं।''[29]

भारतीय प्रजातंत्र तथा राजनीति की विचित्र विडम्बना रही है कि वह आजादी के बाद से ही विसंगतियों और अन्तर्विरोधों का शिकार बनती रही है। इस भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के पीछे जो सबसे बड़ा कारण है, वह है सत्तालोलुपता और स्वार्थी प्रवृत्ति। सत्तालोलुपता भारतीय राजनीति की एक विकट विद्रूपता है। भारतीय राजनीति में राजनीतिज्ञों का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। सत्ता के प्रति अपार प्रेम ही जनता को नेता बनाता है। दरअसल राजनेता सत्ता के प्रति अपने अपार लगाव को मानव–सेवा का नाम देते हैं। स्वाधीनता के पश्चात त्यागी तथा चरित्रवान राजनीतिज्ञों की जगह भ्रष्टाचार, सत्तालोलुप और अवसरवादी राजनेताओं की एक समूह संसद में आ पहुँची है एवं इस जमात का ही लक्ष्य है सत्ता–सुंदरी का वरण। हरिशंकर परसाई जी इन समस्त विषय पर अत्यन्त क्रूर होकर निर्मम व्यंग्य प्रहार करते हैं। राजनेताओं की विचारधारा शून्य, चरित्रहीनता, सिद्धान्तहीनता तथा दल–बदलू नीति की निर्ममता के साथ आक्रमण करते हैं। 'छिनाल नेता या जनता' नामक व्यंग्य लेख में भ्रष्ट राजनीतिज्ञों पर करारा चोट करते हुए कहते हैं कि – ''इस देश का नेता जनता को बदचलन औरत समझकर उसे तरह–तरह से फुसलाता है। अपनी नेताई छवि से, वादों से नारों से, उछल–कूद से, लोभ से, छाती–पीट से, अश्रुपात से, हिन्दुवाद से, गाँधीवाद से, समाजवाद से गाने गाता है, सीटी बजाता है, हाव–भाव करता है। मगर कभी–कभी जनता पलटकर इस नेता को चप्पल जड़कर कहती है – हरामजादे मैं क्या तूझे नहीं जानती हूँ, तू शोहदा है।''[30]

''विभागों की क्या कमी है? किसी को जमाऊ विभाग का मंत्री, किसी को उखाडू विभाग का मंत्री, कोई घपला मंत्री, कोई कांड मंत्री। फिर विभागों को और तोड़ दो। शिक्षा–विभाग में एक पहली कक्षा का मंत्री, दूसरा, दूसरी कक्षा का मंत्री तीसरा, तीसरी कक्षा का मंत्री इस तरह।''[31]

समकालीन राजनीतिज्ञों का कुर्सी–प्रेम इतना गहरा है कि प्रत्येक राजनेता मंत्रीमंडल में मंत्री का गद्दी प्राप्त करना चाहता है। नेताओं को पदलोलूपता से इतना ज्यादा लगाव रहता है कि बिना विभाग के भी मंत्री बनाना पड़ता है। यह भारतीय प्रजातांत्रिक व्यवस्था की बहुत बड़ी विडम्बना है जो हरिशंकर परसाई जी इस विचित्र स्थिति पर तीखा व्यंग्य करते हैं।

हरिशंकर परसाई जी भारतीय राजनीति में प्रारम्भ किये गये तरह–तरह के राजनीतिक क्रांति तथा आन्दोलनों के मूल्यांकन करते हैं तथा उन सब आंदोलनों की खामियाँ और विफलता पर वक्रोक्ति शैली में व्यंग्य करते हैं। आजादी के बाद राष्ट्र–निर्माण के विभिन्न प्रकार की योजनाएँ बनायी गयीं। भारत के अन्तर्गत छोटे–छोटे रियासतों को मिलकर राज्यों का निर्माण, भूमि सुधार, सहकारी खेती, पंचवर्षीय योजनाएँ, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, कोयला–खानों का राष्ट्रीयकरण आदि योजनाएँ अस्तित्व में आयी। ऐसी विकट परिस्थिति में विभिन्न तरह के आंदोलनों का उदय देश में होता है। इनमें से कुछ आतंकवादी, अलगाववादी, अराजकतावादी, पत्थरवादी थीं तो कुछ समाज–सुधार तथा मानव हित की थी। हरिशंकर परसाई जी इन सब आंदोलनों का विचार–विश्लेषण करते हैं तथा इन सबकी विसंगतियों पर व्यंग्य प्रहार करते हैं। हिन्दुस्तान की राष्ट्रीयता और अखण्डता को तार–तार करने वाली शक्तियों के खिलाफ परसाई जी निरन्तर व्यंग्य आक्रमण कर लिखते रहे हैं। चाहे कश्मीर और खालिस्तान की माँग हो, असम एवं उत्तर–पूर्वी राज्यों में अलगाववाद का आन्दोलन हो, 'सम्पूर्ण क्रांति' हो, 'दूसरी आजादी का आन्दोलन', 'भूदान आन्दोलन', 'गरीब हटाओ आन्दोलन', 'गोरक्षा आन्दोलन', अलगाववादी आन्दोलन, समाजवादी आन्दोलन, इत्यादि आन्दोलनों की विद्रूपताओं पर करारा चोट करते हुए लिखते हैं कि – ''क्रांति–क्रांति के आन्दोलन को वे जनता का नहीं पूँजीपतियों का आन्दोलन कहते हैं। क्रांति आखिर क्या है? प्याऊ है जिसे पैसेवाला खोल देता है और हम उसका खेराती पानी पीते हैं? सम्पूर्ण क्रांति की प्याऊ भी तो लोकनायक ने गोयनका वगैरह से खुलवा दी।''[32] ''बाबा ने कहा – कबीर, तुम गलत समझे। क्रांति मैंने कभी नहीं लानी चाही। वह तो तेलंगाना में किसानों के हिंसक आन्दोलन को देखकर मुझे लगा कि भूमिहीन किसानों को भूमि की भूख है, तो मैं निकल पड़ा भूदान के लिये पैदल। कबीर ने पूछा – फिर क्या हुआ? बाबा ने माया ठोककर कहा –– सबने को बाबा को धोखा दिया। बंजर जमीन बाबा को दे दी, जहाँ घास की एक पत्ती नहीं उगती और अखबारों में छपवा दिया हमने सौ एकड़ भूमि दान कर दिया।''[33]

''जब चुनाव आता है, तब हमारे नेताओं को गौ–माता सपने में दर्शन देती हैं, कहती हैं – बेटों, चुनाव आ रहा है अब मेरी रक्षा का आन्दोलन करो। देश की जनता अभी मूर्ख है। मेरी रक्षा का आन्दोलन करके वोट ले लो।''[34]

तत्कालीन युग को वैज्ञानिक युग कह सकते हैं, जहाँ निरन्तर नई–नई तकनीकी अस्त्र–शस्त्र तथा वैज्ञानिक

उपकरण, औजार विकसित हो रहे हैं। वहीं इसका विकास आंतरिक सुरक्षा के लिए कम, विध्वंस व विनाश के लिए अधिक हो रहा है जो शक्तिशाली राष्ट्र (सुपरपावर) हैं, वे क्षमता का ढिंढ़ोरा पीटते हैं। इन समस्त विद्रूपताओं एवं अन्तर्विरोधों को, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नित निरन्तर बदलते हुए परिदृश्य में विश्व राजनीति के परिवर्तन को श्रेष्ठ व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई जी पर्दाफाश करते हुए कहते हैं कि – ''दुनिया में दूसरे महायुद्ध के बाद से ही शीतयुद्ध, हथियारों की होड़, एक से बढ़कर एक घातक परमाणु अस्त्रों के अम्बार। तीसरे दुनिया के नव स्वाधीन गरीब विकाशील देशों का नव–साम्राज्यवादियों द्वारा शोषण, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा लूटा। विश्वव्यापी साम्राज्यवादी युद्धोन्मादी शक्तियों द्वारा लोकतंत्र का नाश, सरकारें पलटना, हत्याकाण्ड और व्यापक तौर पर अमानवीयकरण। मजहब के नाम पर चलनेवाली बर्बर तानाशाही और राजशाही। मनुष्य की अस्मिता भंग हो रही है। मानव गरिमा का नाश हो रहा है। हर आदमी दुनिया में असुरक्षित महसूस करता है। हर आदमी डरा हुआ है। अरबों आदमी भूखें हैं। मगर उनकी रोटी का पैसा हथियारों में लग रहा है। किसी दिन–जानकर, अनजाने भूल से या एक्सीडेन्ट से विश्वयुद्ध शुरू हो सकता है और तब चन्द घंटों में न मनुष्य जाति रहेगी, न उसकी सभ्यता और संस्कृति। मेरी नजर अपने घर से लेकर वियतनाम, निकारागुआ, नामीबिया तक हैं। मैं सिफ दिल्ली नहीं वाशिंगटन, मास्को, बीजिंग, के तेवर भी देखता हूँ। हर देश की अपनी नियति होती है, पर अब विश्व की एक सामूहिक नियति भी है, जिसमें बचा नहीं जा सकता।''[35]

हरिशंकर परसाई जी अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन की मानव–नाश नीतियों के खिलाफ प्रहार करते हुए कहते हैं कि – ''अखबार में खबर है कि 20 करोड़ डॉलर मध्य में गड़बड़ी करने के लिए अलॉट किये गये हैं। इस्राइल को भी परोपकार के मद में से कई करोड़ डॉलर दिये जाते हैं। भारत को धमकाने के लिए जो अरबों डॉलर और हथियार पाकिस्तान को दिये जाते हैं वे भी परोपकार के मद में हैं।''[36]

इस प्रकार हरिशंकर परसाई अमेरिका की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक विसंगतियों पर गहन विचार–विश्लेषण किया है। इसके अलावा यूरोपीय देशों के राजनीतिक परिवेश का प्रसंग बनाकर अपने व्यंग्य लेखन को किया है जिसमें रूस, इटली, फ्रांस, स्पेन, पोलैण्ड, नार्वे, स्वीडन, ब्रिटिश, वेनिस, नीदरलैंड आदि शासनाध्यक्षों के विषय पर व्यंग्य प्रहार किया है। इसके अतिरिक्त एशियाई राष्ट्रों के राजनीतिक परिस्थितियों के संदर्भ में काफी कुछ लिखा हैं जिसमें पाकिस्तान, ईरान, चीन, लीबिया, अरब, अफगानिस्तान, कोरिया, बांग्लादेश, जापान, इण्डोनेशिया, वियतनाम, फिलिस्तीन, इस्राइल, अरब, लंका इत्यादि राष्ट्र–प्रधानों को सन्दर्भित कर काफी कुछ व्यंग्य लेख लिखे हैं। डॉ0 श्यामसुन्दर मिश्र हरिशंकर परसाई जी के अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक व्यंग्य–लेखन के संदर्भ में कहते हैं कि – ''विश्व का एक भी राष्ट्रनायक या राजनेता ऐसा नहीं है, जिसने मानवीय संघर्ष को बढ़ाने या कमजोर करने में अपनी भूमिका निभाई हो, और परसाई की दृष्टि के सामने न आया हो। दूसरे महायुद्ध के बाद से आज तक जितने भी अमेरिकी राष्ट्रपति, ब्रिटिश प्रधानमंत्री, सोवियत राष्ट्रपति, और पार्टी सचिव या प्रधानमंत्री हुए हैं। उन सबके बारे में परसाई ने लिखा है। उन्होंने गुट–निरपेक्ष आन्दोलन में कार्यरत तीसरे विश्व के राजनेताओं के चरित्रांकन और विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में साम्राज्यवाद के विरोध जूझने वाले व्यक्तियों के साथ ही उस मानवीय रीति–नीति का भी पर्दाफाश किया है जो विश्व मानवीयता को युद्ध की मानव संहारक विभीषिका में झोकती है।''[37]

इस प्रकार व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई भारतीय राजनीति से लेकर विश्व–राजनीति की घटनाओं पर दृष्टि रखनेवाला जागरूक तथा सजग प्रहरी लगते हैं। उनके यहाँ राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का केवल यथार्थ ही नहीं है। दरअसल यथार्थ के साथ गहन विचार–विश्लेषण के द्वारा वर्तमान और भविष्य के स्वच्छ निर्माण के प्रति एक स्वस्थ कामना भी है।

अध्ययन का उद्देश्य

इस तरह उन्होंने साम्यवादी जीवन दृष्टि से लोगों, समाज, राष्ट्र, धर्म एवं राजनीति को विचार–विश्लेषण करना आरम्भ किये। वे समाज एवं राजनीति की हर एक घटनाओं को बहुत ही करीब से परखना शुरू किये। इन समस्त घटनाचक्र एवं समस्याओं के प्रति पैनी दृष्टि से देखकर व्याप्त विद्रूपताओं पर उन्होंने व्यंग्य–लेखन की ओर प्रेरित हुआ।

हरिशंकर परसाई जी राजनीतिक और मजदूर संगठनों के क्रिया–कलापों में सक्रिय रूप से हिस्सा लेना शुरू किये। भ्रष्टाचार और शोषण के खिलाफ उनकी संघर्ष सिफ कागज–कलम तक सीमाबद्ध नहीं थे बल्कि अध्यापकों के न्याय के लिए उन्होंने आवाज उठायी।

नागपुर के प्रान्तीय अधिवेशन में अध्यापक संगठन के सहायक सचिव बनाये गये। उन्होंने अपने नवीन विद्या भवन विद्यालय में ही भूख हड़ताल करायी और अध्यापकों की वाजिब माँगों में कुछ सुधार करवाये। इस तरह उन्होंने सक्रिय रूप से शिक्षकों के अधिकार और नौकरी की सुरक्षा के लिए संघर्ष किये। श्रमिक आन्दोलन में भी वे सक्रिय रहे और सभा–सीमित एवं चौराहों पर भी जोशीला भाषण दिया करते थे। जबलपुर में परसाई जी बहुत सारे सम्मानीय व्यक्तियों के निकट आये। जैसे, पंडित केशव प्रसाद पाठक, पंडित भवानी प्रसाद तिवारी, रामेश्वर प्रसाद गुरू (जिनके साथ मिलकर 'वसुधा' का प्रकाशन–सम्पादन कार्य किया), रामानुज लाल श्रीवास्तव, महादेव प्रशाद सामी, प्रभात कुमार तिवारी, गोविन्द प्रसाद तिवारी, माखनलाल विद्रोही, रामड्डष्ण श्रीवास्तव, श्री बालपाण्डेय, पुरुषोत्तम खरे आदि। ये कहीं इनके प्रेरणास्रोत हैं तो कहीं लेखन के कथानक में भी विद्यमान हैं। दूसरे एक साक्षात्कार में भी उनसे यही सवाल दूहराते हैं कि ''आपके लेखन में राजनीतिक चेतना की शुरूआत कब से होती है? तब वे कहते हैं, आरम्भ में ही राजनैतिक लोगों के साथ रहने के कारण राजनीतिक चेतना मुझमें थी। वे लोकतांत्रिक समाजवादी लोग थे जिनके नेता जय प्रकाश नारायण थे। पहले आम चुनाव में इनका सफाया हो गया। इनमें खीझ आयी और 'फ्रस्ट्रेश' आया और ये टूट–फूट गये। संयोग से तभी मेरा सम्पर्क कम्युनिस्ट

पार्टी से हुआ और मार्क्सवादी दर्शन तथा साहित्य से मेरा परिचय हुआ। अध्ययन से और साम्यवादियों के सम्पक से मैंने बहुत कुछ सीखा। अब मेरी दृष्टि साफ है। मैं श्रमिक आंदोलन से तभी सम्बद्ध हो गया। मेरा अनुमान है कि सन् 1953 से 1954 में मार्क्सवाद का प्रभाव में आ गया। तभी मेरा सम्पक मुक्तिबोध से हुआ और उन्होंने मेरे मार्क्सवादी विश्वासों को मजबूत किया तथा दृष्टि को साफ और सही दिया।''[38]

इस प्रकार हरिशंकर परसाई जी की जीवन में राजनीतिक–चेतना का विस्तार होते हैं। उन्होंने अपने समय के राजनीतिक विद्रूपताओं को देखे, अनुभव किये एवं कड़े तेवर के साथ अपने रचनाओं में अभिव्यक्ति किये हैं।

उनके पास काफी गहरा इतिहास बोध का अनुभव है जिसके चलते अपनी कालजयी व्यंग्य–लेखन के माध्यम से अपने देश के साथ–साथ विश्व के समस्त देशों को भी उसकी समग्रता में शामिल करते हैं। उन्होंने सिफ भूत ही नहीं समकालीन एवं भविष्य की भी सच की पहचान करते हैं। तत्कालीन राजनीति से गुजरते हुए उन्होंने उस राजनीति से सीधे मुठभेड़ करते हैं एवं आगत सुन्दर स्वस्थ मानव भविष्य के लिए इतिहास से प्रश्न भी करते हैं।

उन्होंने जहाँ भारतीय राजनीति के विसंगतियों को अभिव्यक्त करते हैं वहीं अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के मानस पटल पर चल रहे धमा–चौकड़ी को भी बेहद प्रहारात्मक शैली में अभिव्यक्त करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर वे उन समस्त ताकतों एवं महाशक्तियों को पर्दाफाश करते हैं जो विश्व मानवता के लिए खतरनाक है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र पर चल रहे आर्थिक साम्राज्यवाद एवं पूँजीवाद के साँठ–गाँठ को वे विश्व–मानवता के लिए बड़े संकट के रूप में पहचान करते हैं। वे उन समस्त कूटनीतियों को बेनकाब करते हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय महाशक्तियाँ किसी दुर्बल देश को शोषण करते हैं। विश्व–बंधुत्व, अमन–चैन एवं उन्नति के नाम पर विकसित देश जिस रूप से साम्राज्यवाद एवं पूँजीवाद को प्रोत्साहन देते हैं, परसाई जी उन सभी पर खुलेआम व्यंग्य प्रहार करते हैं। चाहे अमेरिका हो या चीन सबकी कूटनीति चालों से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना प्रभाव कायम करना ही रहा है। इस तरह उन्होंने वैश्विक कूटनीतियों एवं भ्रष्ट नेताओं पर तीखी आक्रमण करते हैं। अमेरिकी राष्ट्रपतियों पर तीखी आलोचना करते हैं। पाकिस्तानी कटरपंथी नेताओं को भी वे नहीं छोड़ते हैं। उन्हें जो अप्रजातांत्रिक लगा है, मानवताहीन चरित्रों व्यंग्य प्रहार किये हैं। सिफ दुष्ट नेताओं के चरित्र का ज्ञान नहीं है, बल्कि महाशक्ति देशों के चरित्र की गहरी परख रखते हैं। गणतंत्र विरोधी पाकिस्तान की आतंकवादी स्वभाव हो या मजहबी बांग्लादेश का कटरवादी सोच हो या इजराइल का आतंकी या कब्जा करने वाले चरित्र हो, वियतनाम का संघर्षशील चरित्र हो या अमेरिका एवं चीन का दादागिरी वाला चरित्र हो, इन सब में हरिशंकर परसाई जी ने विसंगतियों पर व्यंग्य प्रहार से सामने लाते हैं। इस तरह उन्होंने किसी पर नरमी नहीं बरतते हैं और न किसी के प्रति दुराग्रह रखते हैं। बल्कि अपनी प्रतिबद्धता जन–मानस के प्रति दिखाते हैं जो किसी भी मुल्क का नागरिक हो सकते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हरिशंकर परसाई जी के साहित्य में तत्कालीन राजनीतिक यथार्थ राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य को समेटे हुए उपस्थिति है। उनका साहित्य की धुरी राजनीति ही है। उनका व्यंग्य–लेखन का अधिक हिस्सा राजनीति को लेकर चलते हैं। वे अपने समय के राजनीतिक यथार्थ को ज्यों का त्यों अभिव्यक्त कर देते हैं। इस तरह उनका साहित्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विद्रूपताओं या कटु–यथार्थ का दर्शन कराते हैं एवं जन–मानस की चेतना को राजनीतिक रूप से माँजते भी हैं।

निष्कर्ष

साहित्य, समाज तथा राजनीति के विषय में हरिशंकर परसाई जी की जैसे विचार करने वालों की संख्या अपेक्षाङ्गत कम है। हरिशंकर परसाई जी ने कथा–साहित्य के रूप में कहानी, उपन्यास, निबन्ध, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, स्तम्भ–लेखन इत्यादि का चयन किया। वे इन विधाओं के माध्यम से अपने व्यंग्य–लेखन की स्प्रिट को एक नये रूप में अभिव्यक्त किये हैं। उन्होंने व्यंग्य को सर्वथा एक नये गरिमा प्रदान किये हैं। उस समय तक व्यंग्य को शूद्र समझी जाने वाली को उन्होंने ब्राह्मणत्व प्रदान किये हैं। व्यंग्य स्वातंत्र्योत्तर युग में विङ्गतियों के अनावरण का सबसे तीखा, सशक्त तथा अचूक आक्रमण का माध्यम रहा है। दरअसल, सदियों से देखने को मिलता है कि सर्वाधिक विङ्गतियाँ राजनीति के क्षेत्र में ही पनपती रही है। सिफ यही नहीं, वर्तमान युग में राजनीतिक शक्ति तथा आतंक का पर्याय भी बन चुकी है। वैसे तो वर्तमान युग में समाज का प्रत्येक क्षेत्र विसंगतियों से व्याप्त है। किन्तु राजनीतिक में भ्रष्ट नीतियों का बोलबाला अधिक है। इस तरह हरिशंकर परसाई जी अपने व्यंग्य–लेखन के माध्यम भ्रष्ट राजनीतिक विद्रूपताओं को सिफ उजागर ही नहीं किया बल्कि व्यंग्य रूपी हथियार से उस हिस्सों पर तीखा आक्रमण करके एक स्वस्थ राजनीति के भविष्य का सनपा भी दिखलाते हैं। इस प्रकार हरिशंकर परसाई जी मानव–समाज को बेहतर बनानेवाली राजनीति से जुड़े व्यंग्यकार हैं।

हरिशंकर परसाई के पास गम्भीर इतिहास–बोध है जिसके चलते अपनी कालजयी व्यंग्य–लेखन के माध्यम से राष्ट्रीयता के साथ–साथ अन्तर्राष्ट्रीय को भी उसकी सम्पूर्णता को पकड़ते हैं। वे उन सब भ्रष्ट शक्तियों को पर्दाफाश करते हैं जो विश्व मानवता के लिए खतरा है। वे उन समस्त भ्रष्ट नीतियों का उजागर करते हैं, जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शक्तिशाली राष्ट्र किसी दुर्बल देश को हड़पने के लिए करते हैं। चाहे चीन हो या अमेरिका। हरिशंकर परसाई उन सभी ताकतों के खिलाफ व्यंग्य प्रहार करते हैं। कबीर की भाँति उन्होंने राजनीतिक व्यंग्य साहित्य सिफ राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विद्रूपताओं को बेनकाब ही नहीं करते, बल्कि आम जनता की चेतना को राजनीतिक समझ से भी माँजते हैं। इस प्रकार भारतीय राजनीति और प्रजातंत्र की इस पतन को अवहेलना करना किसी भी प्रतिबद्ध व्यंग्यकार के लिए सम्भव नहीं है। अतः हरिशंकर परसाई जी ने अपने

राजनीतिक–व्यंग्य लेखन में इन विडम्बनाओं को पूरी कलात्मक के साथ अभिव्यक्त किये हैं। कुर्सी लोलुप राजनेताओं की जमात बढ़ी। भारीतय प्रजातांत्रिक व्यवस्था में 'तंत्र' को प्रजा के विरोधी काम में लाया जाने लगा। अतः इन सब स्थितियों में भारतीय प्रजातंत्र एक धोखा देने वाला नारा बन गया। क्योंकि आज राजनीति में नीति को भ्रष्ट नेता गायब कर दिए तथा राज को सर्वश्रेष्ठ कर्म मान बैठे हैं।

अतः भारतीय जीवन की इस तरह की सच्चाई को अवहेलना करना किसी भी गम्भीर तथा प्रतिबद्ध व्यंग्यकार के लिए सम्भव नहीं था। इस प्रखार हरिशंकर परसाई जैसे जागरूक व्यंग्यकार ही राजनीतिक जीवन के यथार्थ को उसके विविध आयामों के साथ तीखा आलोचना करते हैं जो कि राजनीति मानव समाज की भाग्य तय करती है जो विभिन्न प्रकार की साजिश और तिलिस्म से जनमानस को अवगत हो सके। इस तरह स्वाधीनता के पश्चात् भारतीय राजनीति ने जिस भी क्षेत्र से गुजरकर यात्रा की है, वह दस्तावेज के रूप में हरिशंकर परसाई के व्यंग्य साहित्य में विद्यमान हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएँ, सम्पादक–कन्हैयालाल नन्दन, राजपाल एण्ड सन्ज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2010, पृ0 सं0–07*
2. *श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएँ, सम्पादक–कन्हैयालाल नन्दन, राजपाल एण्ड सन्ज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2010, पृ0 सं0–15*
3. *परसाई रचनावली–3, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 76*
4. *परसाई रचनावली–3, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–78*
5. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 172*
6. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–414*
7. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–168*
8. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–99*
9. *परसाई रचनावली–2, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 17*
10. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 424*
11. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–103*
12. *परसाई रचनावली–3, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 230*
13. *परसाई रचनावली–3, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–77*
14. *परसाई रचनावली–4, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 64*
15. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 250*
16. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–250*
17. *परसाई रचनावली–1, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0–357*
18. *परसाई रचनावली–5, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 23*
19. *आँखन देखी, सम्पादक–कमला प्रसाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 15*
20. *परसाई रचनावली–6, सम्पादक–कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 279*
21. *उर्दू–हिन्दी हास्य व्यंग्य–रवीन्द्र त्यागी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2008, पृ0 सं0 9*
22. *आँखन देखी, सं0 कमला प्रसाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2000, पृ0 सं0 30*
23. *हरिशंकर परसाई : व्यंग्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, प्रो0 राधेमोहन शर्मा, भूमिका प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–1998, पृ0 सं0 75*
24. *परसाई का व्यंग्य साहित्य : राजनीति का विविध आयाम, डॉ0 संध्या कुमारी सिंह, आस्था प्रकाशन, कोलकाता, संस्करण–2010, पृ0 सं0 43*
25. *आँखन देखी, सं0 कमला प्रसाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2000, पृ0 सं0 36*
26. *हिन्दी गद्य लेखन में व्यंग्य और विचार, सुरेशकान्त, पृ0 सं0 171*
27. *परसाई रचनावली (भाग–6) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 244*
28. *परसाई रचनावली (भाग–3) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 77*
29. *परसाई रचनावली (भाग–3) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 137*
30. *परसाई रचनावली (भाग–4), सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 242*

31. *परसाई रचनावली (भाग–6) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 111*
32. *परसाई रचनावली (भाग–4), सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 68*
33. *परसाई रचनावली (भाग–6) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 93*
34. *परसाई रचनावली (भाग–2) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 156*
35. *परसाई रचनावली (भाग–6) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 221*
36. *परसाई रचनावली (भाग–2) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 285*
37. *परसाई रचनावली (भाग–4) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 03*
38. *परसाई रचनावली (भाग–4) – सम्पादक कमला प्रसाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0 सं0 410*